अनिल कुमार गोयल

बनाम

किशन चंद कौरा

12 दिसंबर, 2007

{डॉ. अरिजीत पसायत एवं अफताब आलम, जे. जे.}

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881। धारा 138 और 142 (ख) परंतुक- धारा 142 (ख) के परंतुक का 2002 में सम्मिलन-मर्यादा अवधि का विस्तार-तथ्यानुसार, पाने वाले द्वारा अनादरित चेक की क्रमिक प्रस्तुति -2002 से बहुत पहले होने वाली घटनाएँ-परिवाद धारा 138 के तहत-पोषणीयता निर्धारित-धारा 142 (ख) में संशोधन भूतलक्षी प्रभाव से करने का आशय नहीं-पाने वाले ने भी यह आधार नहीं लिया-निर्धारित-उच्च न्यायालय का आदेश कि धारा 138 का परिवाद इस आधार पर पोषणीय है कि धारा 142 (ख) का परंतुक पर्याप्त कारण दर्शित किये जाने पर मर्यादा अवधि बढाने के लिये न्यायालय को सक्षम बनाता है-अपास्त- परिवाद के आधार पर संस्थित कार्यवाही रद्द।

अपीलार्थी ने 31.3.1998 को प्रत्यर्थी के पक्ष में चेक जारी किया जिसे 11.4.1998 को प्रस्तुत करने पर अनादरित किया गया था। प्रत्यर्थी ने 24.4.1998 को अपीलार्थी को नोटिस जारी किया। उस पर अपीलार्थी द्वारा आश्वासन देने पर चैक फिर से प्रस्तुत किया गया लेकिन 30.9.1998

को फिर से अनादरित हो गया। प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को 13.10.1998 को नोटिस जारी किया लेकिन भुगतान नहीं किया गया था। इसके पश्चात दिनांक 28.11.1998 को प्रत्यर्थी ने धारा 138 एन.आई. एक्ट 1881 का परिवाद पेश किया।

अपीलार्थी ने धारा 245 सीआरपीसी का प्रार्थना पत्र उन्मोचित करने हेतु पेश किया परन्तु वह खारिज कर दिया गया। तब अपीलार्थी ने धारा 482 सीआरपीसी के तहत एक आवेदन धारा 138 के तहत परिवाद को निरस्त करने के लिये इस आधार पर दायर किया कि परिवाद धारा 142 (ख) एन.आई.एक्ट के तहत पोषणीय नहीं था। उच्च न्यायालय ने आवेदन इस आधार पर खारिज कर दिया कि धारा 142 (ख) का परंतुक जो कि 2002 के अधिनियम 55 द्वारा समावेशित किया गया था, न्यायालय को पर्याप्त कारण दर्शित किये जाने पर मर्यादा अवधि विस्तारित करने हेतु सक्षम बनाता है। अतः वर्तमान अपील पेश की गई।

अपील स्वीकार करते हुए न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया-

1.1 संशोधन से पहले धारा 142 (ख) परक्राम्य लिखित अधिनियम 1881 का परंतुक विद्यमान नहीं था। धारा 138 के खण्ड ए का परंतुक पाने वाले को अनादरित चैक को उसकी वैधता अवधि के दौरान क्रमिक रूप से लगाने को निषेध नहीं करता है। इसके अलावा व्यापारिक

संव्यवहार के सामान्य अनुक्रम में यह असामान्य नहीं है कि कोई चैक जो कि अपर्याप्त निधि अथवा ऐसे आधारो पर अनादरित किया गया हो को कुछ समय पश्चात पाने वाले द्वारा स्वयं की प्रेरणा पर या लेखिवाल के निवेदन पर इस उम्मीद में पुनः बैंक में लगाया जावे कि वह भुन जायेगा। पाने वाले का मुख्य आशय अपना धन प्राप्त करना होता है ना कि लेखिवाल का अभियोजन। इसलिये साधारणतः परिवाद पेश करना उसकी मजबूरी है ना कि उसकी इच्छा। चैक के प्रत्येक बार पेश करने और उसके अनादरित होने से एक नया अधिकार ना कि एक वाद कारण-उसके पक्ष में उत्पन्न होता है। इसलिये वह अपने धारा 138 के खण्ड बी में प्रदत्त अधिकार के प्रयोग में कोई कार्यवाही किये बिना चैक को पुनः पेश कर सकता है ताकि चैक की वैधता अवधि के दौरान किसी समय वह अपने अधिकार का प्रयोग कर सके। (पैरा-6) (318-डी,ई,एफ,जी)

1.2 मूल अधिकारों को प्रभावित करने वाले सभी कानून आम तौर पर भावी रूप से लागू होते है। और उनके भूतलक्षी प्रभाव के विरूद्ध एक उपधारणा है यदि वे निहित अधिकारों और दायित्वों को प्रभावित करते हैं, जब तक कि विधायिका का आशय स्पष्ट एवं बाध्यकारी ना हो। ऐसा भूतलक्षी प्रभाव वहां दिया जा सकता है जहां भूतलक्षी प्रभाव देने वाले शब्द स्पष्ट हो अथवा जहां प्रयुक्त भाषा आवश्यक रूप से दर्शित करती हो कि ऐसा भूतलक्षी प्रभाव आशयित है। अतः यह प्रश्न कि कोई वैधानिक प्रावधान भूतलक्षी प्रभाव रखता है या नहीं उसमें प्रयुक्त की गई भाषा पर निर्भर

करता है। यदि भाषा स्पष्ट नहीं हो तब कोर्ट को यह निर्धारित करना पडता है कि विद्यमानद परिस्थतियों में इसे भूतलक्षी प्रभाव दिया जाना चाहिए या नहीं। (पैरा 8) (319-डी, ई, एफ)

मेसर्स पंजाब टिन सप्लाई कंपनी, चंडीगढ़ आदि बनाम केंद्रीय सरकार और अन्य, ए. आई. आर. 1984 एस. सी. 87-पर निर्भर।

2. विद्यमान मामले में, 142 (ख) के संशोधन जो कि 2002 के अधिनियम 55 द्वारा किया गया है में ऐसा कुछ भी नहीं है कि उसे भूतलक्षी प्रभाव से लागू करने का आशय हो। वास्तव में प्रत्यर्थी के द्वारा यह आधार लिया भी नहीं गया था जब 28.11.1998 को परिवाद पेश किया गया था प्रत्यर्थी को यह आशा भी नहीं थी कि भविष्य में पर्याप्त कारणों के आधार पर मर्यादा अवधि को बढाने के लिये संशोधन पारित किया जायेगा। अतः उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण स्वीकार योग्य नहीं है और अपास्त किये जाने योग्य है। परिवाद के आधार पर संस्थित कार्यवाही अपास्त की जाती है (पैरा 9 और 10) (319-जी;320 - ए, बी,)

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार- आपराधिक अपील 2007 का सं. 1704

पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के निर्णय एवं आदेश दिनांक 16.03.2006 क्रि मिस संख्या 10233/2006 से।

गगन गुप्ता, गुरप्रीत बावा और परमानंद गौर अपीलार्थी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय दिया गया द्वारा- डॉ. अरिजीत पासायत, जे.

1. अनुमति दी गई।

2. इस अपील में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के द्वारा धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहित 1973 के तहत पेश किये गये प्रार्थना पत्र को खारिज करने के आदेश को चुनौती दी गई है। अपीलार्थी द्वारा एक याचिका प्रत्यर्थी द्वारा धारा 138 एन.आई.एक्ट के तहत पेश किये गये परिवाद को रद्द करने के लिये पेश की गई। परिवाद में यह अंकित किया गया था कि अपीलार्थी द्वारा दिनांक 31.03.1998 को चैक जारी किया गया था जो कि दिनांक 11.04.1998 को बैंक में पेश करने पर अनादरित हो गया। दिनांक 27.04.1998 का नोटिस अपीलार्थी पर सम्यक रूप से तामील हो गया तब अभियुक्त अपीलार्थी ने आश्वासन दिया कि चैक दुबारा पेश करने पर भुन जायेगा। चैक पुनः पेश किया गया परंतु वह 30.09.1998 को पुनः अनादरित हो गया जिस पर दिनांक 13.10.1998 को अपीलार्थी को पुनः नोटिस दिया गया परंतु कोई भुगतान नहीं किया गया। अपीलार्थी ने धारा 245 दण्ड प्रक्रिया संहित 1973 के तहत विचारण न्यायालय ने उन्मोचित किये जाने हेतु प्रार्थना पत्र पेश किया और यह कथन किया कि परिवाद अवधि बाहर है और निरस्त किये जाने योग्य है। प्रत्यर्थी ने इसका विरोध किया। विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट ने प्रार्थना पत्र यह कहते हुए खारिज कर दिया कि अदालत प्रसाद बनाम रूपलाल जिंदल

और अन्य 2004 (7) एस. सी. सी. 338, के निर्णय के अनुसार विचारण न्यायालय आदेशिका जारी करने के आदेश का पुर्नविलोकन नहीं कर सकता है जबकि परिवाद के मामले में दिये गये आदेश की पालना में आदेशिका जारी कर दी गई हो। अपीलार्थी ने धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत याचिका पेश की जो कि खारिज कर दी गई। यहां यह ध्यान देने योग्य है कि अपीलार्थी का उच्च न्यायालय के समक्ष केवल यह आधार था कि यदि प्रत्यर्थी के द्वारा कथित स्थिति को सही मान लिया जाये तो धारा 142 बी एन.आई.एक्ट के अनुसार परिवाद संधारण योग्य नहीं है। उच्च न्यायालय ने यह कहते हुए प्रार्थना पत्र खारिज कर दिया कि धारा 142 ख एन.आई.एक्ट का परंतुक 2002 के अधिनियम 55 द्वारा समावेशित किया गया है जो कि न्यायालय को सक्षम बनाता है कि वह पर्याप्त कारण दर्शित किये जाने पर मर्यादा अवधि को विस्तारित कर सके। इसलिये याचिका खारिज किये जाने योग्य है।

3. अपील के समर्थन में अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का कथन रहा है कि 2002 के अधिनियम 55 का समावेशित संशोधन मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है क्योंकि विभीन्न घटनाएं 2002 से काफी पहले घटित हुई है। यहां तक कि परिवाद भी 28.11.1998 को पेश किया गया था। यह भी ध्यान दिलाया गया कि प्रत्यर्थी का मामला यह नहीं था कि वर्तमान मामला संशोधन से प्रभावित होता है। ऐसा कोई आधार नहीं लिया गया था। उच्च न्यायालय एक नया मामला उत्पन्न नहीं कर सकता था।

4. प्रत्यर्थी की ओर से कोई उपस्थिति नहीं है।

5. विवाद के समाधान के लिए धारा 138 और धारा 142 अधिनियम प्रासंगिक हैं। वे इस प्रकार हैं-

धारा 138- लेखों में जमा राशि अपर्याप्त होने आदि के कारण चैकों का अनादृत हो जाना- जहां किसी व्यक्ति द्वारा किसी बैंक में संधारित अपने खाते में से अपने किसी ऋण अथवा अन्य दायित्व से भागतः या पूर्णतः उन्मोचित होने के लिए कोई चैक दिया जाता है और वह चैक खाते में अपर्याप्त राशि होने के कारण अथवा पहले से ही उस खाते में से किन्हीं अन्य व्यक्तियों को संदाय करने का करार दिये जाने के कारण बैंक द्वारा बिना भुगतान किये पुनः लौटा दिया जाता है, वहां यह समझा जायेगा कि उस व्यक्ति ने अपराध कारित किया है और उसे इस अधिनियम के अन्य उपबंधो पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उतनी अवधि के कारावास से {जो कि दो वर्ष तक की हो सकेगी} अथवा उतनी राशि के जुर्माने से जो चैक की राशि से दुगुनी तक हो सकेगी अथवा दोनों से दण्डित किया जा सकेगा।

परन्तु इस धारा की कोई बात तब तक लागू नहीं होगी, जब तक किः-

(क) वह चैक जारी होने की तिथि से छः मास के अंदर अथवा उसके विधिमान्य रहने की अवधि के अंदर, जो भी पूर्व हो, बैंक में पेश नहीं कर दिया जाता,

(ख) चैक के अधीन राशि पाने वाला अथवा सामान्य अनुक्रम में चैक का धारक, यथास्थित, बैंक से चैक के अनादृत होकर लौटने कीी तिथि से {तीस दिवस के अंदर} चैक के लेखीवाल को शोध्य राशि का संदाय करने के आशय की लिखित सूचना नहीं दे देता, और,

(ग) लेखीवाल उस सूचना की प्राप्ति के पन्द्रह दिन के अंदर उस व्यक्ति को जो चैक के अधीन राशि प्राप्त करने वाला हो अथवा जो सामान्य अनुक्रम में चैक का धारक हो, उस राशि का संदाय करने में असफल नहीं रहता।

स्पष्टीकरण- इस धारा के प्रयोजनार्थ ''ऋण अथवा अन्य दायित्व'' से अभिप्राय विधितया प्रवर्तनीय ऋण अथवा अन्य दायित्व से है।

धारा 142- अपराधो का प्रसंज्ञान- दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुए भी-

(क) धारा 138 के अधीन किसी अपराध के लिए, कोई भी न्यायालय चैक के अधीन राशि प्राप्त करने वाले अथवा सामान्य अनुक्रम में चैक के धारक के लिखित परिवाद के सिवाय, प्रसंज्ञान नहीं लेगा,

(ख) ऐसा परिवाद धारा 138 के परंतुक के खण्ड (ग) के अधीन वाद हेतुक उत्पन्न होने की तिथि से एक माह के अंदर पेश कर दिया जाना चाहिए,

{परन्तु न्यायालय के द्वारा वर्णित अवधि के पश्चात परिवाद का प्रसंज्ञान लिया जा सकता है, यदि परिवादी न्यायालय को सन्तुष्ट करता है, कि ऐसे अवधि के दौरान उसके पास परिवाद पेश नहीं करने के लिए पर्याप्त कारण था।}

(ग) महानगर मजिस्ट्रेट अथवा प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट से निम्न पंक्ति के न्यायालय द्वारा धारा 138 के अधीन दण्डनीय किसी अपराध का विचारण नहीं किया जायेगा।

6. संशोधन से पहले जैसा कि ऊपर उद्धृत किया गया है, परंतुक नहीं था। धारा 138 के परंतुक का खण्ड (ए) पाने वाले पर चैक की वैधता अवधि के दौरान उसे पुनः पेश करने पर कोई बाध्यता अधिरोपीत नहीं करता है। इसके अलावा व्यापारिक संव्यवहार के सामान्य अनुक्रम में यह असामान्य नहीं है कि कोई चैक जो कि अपर्याप्त निधि अथवा ऐसे आधारो पर अनादरित किया गया हो को कुछ समय पश्चात पाने वाले द्वारा स्वयं की प्रेरणा पर या लेखिवाल के निवेदन पर इस उम्मीद में पुनः बैंक में लगाया जावे कि वह भुन जायेगा। पाने वाले का मुख्य आशय अपना धन प्राप्त करना होता है ना कि लेखिवाल का अभियोजन। इसलिये साधारणतः परिवाद पेश करना उसकी मजबूरी है ना कि उसकी इच्छा। चैक के प्रत्येक बार पेश करने और उसके अनादरित होने से एक नया अधिकार ना कि एक वाद कारण-उसके पक्ष में उत्पन्न होता है। इसलिये वह अपने धारा

138 के खण्ड बी में प्रदत्त अधिकार के प्रयोग में कोई कार्यवाही किये बिना चैक को पुनः पेश कर सकता है ताकि चैक की वैधता अवधि के दौरान किसी समय वह अपने अधिकार का प्रयोग कर सके।

7. साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 5 (संक्षेप में साधारण खंड अधिनियम) भी विवाद पर काफी प्रकाश डालता है।

धारा 5 निम्न प्रकार है- अधिनियमितियों को प्रवर्तन में आना- जहां कि किसी केन्द्रीय अधिनियम का किसी विशिष्ठ दिन को प्रवर्तन में आना अभिव्यक्ति नहीं है वहां उस दिन को प्रवर्तन में आएगा जिस दिन को-

(क) संविधान के पूर्व बनाए गए केन्द्रीय अधिनियम की दिशा में, गर्वनर जनरल की, तथा

(ख) संसद के अधिनिम की दशा में राष्ट्रपति की, अनुमति प्राप्त होती है।

(ग) जब तक कि तत्प्रतिकूल अभिव्यक्त न हो {केन्द्रीय अधिनियम} या विनियम का ऐसा अर्थ लगाया जाएगा कि वह अपने प्रारम्भ के पूर्ववर्ती दिन का अवसान होते ही प्रवर्तन में आ गया है।

8. मूल अधिकारों को प्रभावित करने वाले सभी कानून आम तौर पर भावी रूप से लागू होते है। और उनके भूतलक्षी प्रभाव के विरूद्ध एक उपधारणा है यदि वे निहित अधिकारों और दायित्वों को प्रभावित करते हैं, जब तक कि विधायिका का आशय स्पष्ट एवं बाध्यकारी ना हो। ऐसा

भूतलक्षी प्रभाव वहां दिया जा सकता है जहां भूतलक्षी प्रभाव देने वाले शब्द स्पष्ट हो अथवा जहां प्रयुक्त भाषा आवश्यक रूप से दर्शित करती हो कि ऐसा भूतलक्षी प्रभाव आशयित है। अतः यह प्रश्न कि कोई वैधानिक प्रावधान भूतलक्षी प्रभाव रखता है या नहीं मुख्य रूप से उसमें प्रयुक्त की गई भाषा पर निर्भर करता है। यदि भाषा स्पष्ट एवं असंदिग्ध है तो प्रश्नगत प्रावधान को उसके तत्वों के अनुसार प्रभाव दिया जायेगा। यदि भाषा स्पष्ट नहीं है तब न्यायालय को विद्यमान परिस्थितियों की रोशनी में यह निर्धारित करना पडेगा कि उसे भूतलक्षी प्रभाव दिया जा सकता है या नहीं। (मैसर्स पंजाब टिन सप्लाई कंपनी, चंडीगढ़ आदि बनाम केंद्र सरकार व अन्य। ए. आई. आर. 1984 एस. सी. 87)

9. 2002 के अधिनियम 55 द्वारा धारा 142 (बी) में किये गये संशोधन में ऐसा कुछ नहीं है जिससे कि उसे भूतलक्षी प्रभाव से लागू करने का आशय हो। यहां तक कि यह प्रत्यर्थी का का आधार भी नहीं था। जाहिर तौर से तब दिनांक 28.11.1998 को परिवाद पेश किया गया था तब प्रत्यर्थी यह नहीं देख सकता था कि भविष्य में पर्याप्त कारण दर्शित किये जाने के आधार पर मर्यादा अवधि को विस्तारित करने का परंतुक संशोधन द्वारा संस्थित किया जावेगा।

10. अतः उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से स्वीकार योग्य नहीं है। उच्च न्यायालय का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है।

प्रत्यर्थी के परिवाद पर संस्थित कार्यवाही अर्थात परिवाद संख्या 120/1998 जे. एम. आई. सी., चंडीगढ़ को रद्द किया जाता है।

11. अपील स्वीकार की जाती है।

एन. जे.

अपील स्वीकार।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी रविकांत जिन्दल (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।